साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2555, कार्तिक पूर्णिमा, 10 नवंबर, 2011 वर्ष 41 अंक 5

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

को नु हासो किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति।
अन्धकारेन ओनद्धा, पदीपं न गवेसथ॥
धम्मपद- १४६, जरावग्गो

जहां प्रतिक्षण (सब कुछ) जल ही रहा हो, वहां कैसी हँसी? कैसा आनंद? (कैसा आमोद? कैसा प्रमोद?) ऐ (अविद्यारूपी) अंधकार से घिरे हुए (भोले लोगो!) तुम (ज्ञानरूपी) प्रकाश-प्रदीप की खोज क्यों नहीं करते?

(आत्मकथन)

अलविदा मेरे भैया!

हम पांच भाइयों में सबसे बड़े बालकृष्ण ९२ वर्ष की उम्र में स्वर्गवासी हुए। वह पिताजी गोपीरामजी के प्रथम पुत्र थे। पिताजी ने देखा कि उनके बड़े भाई रामेश्वर जी के कोई संतान नहीं है और न ही होने की उम्मीद है। तब उन्होंने अपने प्रथम पुत्र को उसकी छोटी उम्र में ही उन्हें गोद दे दिया ताकि बड़े भाई रामेश्वर का वंश चले। पिताजी के सारे परिवार के साथ हम सब मांडले में रहते थे परंतु ताऊजी रामेश्वरजी लगभग ३०० मील उत्तर में मचीना नगर में रहते थे। वहां उनकी राइस मिल थी। बालक बालकृष्ण छोटी उम्र से ही वहीं पला और वहां उसे ताऊजी-ताईजी दोनों से बहुत लाड़-प्यार मिला। अतः उसे अपने मां-बाप का अभाव कभी महसूस नहीं हुआ। बालकृष्ण ने वहीं पढ़ाई की इसलिए भी वह बहुत कम बार मांडले आया करता था। बाबूलाल और मुझे अपने बड़े भाई से बेहद प्यार था। अतः जब-जब हमारी मांडले की स्कूल में दो महीने की गर्मियों की छुट्टी होती थी, तब-तब हम दोनों दो महीने मचीने जाकर अपने ताऊजी के पास रहते थे और बड़े भैया के साथ खेल-कूद कर मन प्रसन्न किया करते थे। बड़े भैया भी हम दोनों को बहुत प्यार करते थे। ताऊजी की दूकान बाजार में थी। पर घर बाजार से १५-२० मिनट की दूरी पर था। बड़े भैया साइकिल पर एक को आगे हेंडल के पास बैठाते और दूसरे को पीछे। यों नित्य सुबह-शाम हम दोनों को प्यार से घर से शहर ले जाते और शाम को वापिस ले आते। भैया का स्कूल भी शहर में ही था। मुझे खूब याद है कि घर पर रहते हुए वह हम दोनों को सुबह-सुबह वहां से बहती हुई इरावदी नदी के तट पर ले जाते। वहां नदी-स्नान करके बहुत आनंद आता था। तभी से मुझे इरावदी नदी से बहुत प्यार हो गया। जो अब तक भी बना हुआ है। बड़े भाई के कारण ही मैं इरावदी के उद्‌गम के स्थान पर डुबकियां लगाता था और वही इरावदी मांडले आकर बहुत विशाल हो गई, तब उसके तट पर भी डुबकियां लगाने का आनंद प्राप्त करता रहा।

मैं तीसरी से १०वीं कक्षा तक मांडले की खालसा स्कूल में पढ़ा। मेरे अधिकांश सहपाठी सिक्ख बालक थे। उनमें से एक ने मुझे 'प्हाऊ' कहना शुरू कर दिया। उसने बताया कि इसका अर्थ होता है 'बड़ा भाई'। मुझे यह शब्द बहुत प्रिय लगा और इसीलिए मैं भी तब से आज तक बड़े भाई बालकृष्ण को 'प्हाऊ' के नाम से ही संबोधित करता रहा। मेरा यह संबोधन उसे भी बहुत प्रिय लगता था। कट्टर सनातनी घर में जन्मने और पलने के बावजूद मैं स्कूल में पढ़ते हुए सिक्खों के भजन तो गाया ही करता था, परंतु मांडले में हमारे घर के समीप आर्य समाज था। उसके संसर्ग से उस विचारधारा का भी मेरे मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। भाई बालकृष्ण भी मचीने के आर्य समाज स्कूल में ही पढ़ता था। अतः मुझे भी आर्य समाज की ओर उन्मुख हुआ देख कर वह बहुत प्रसन्न होता था।

उम्र बढ़ी, विवाह-शादी हुए। काम-काज में लगे और जापानी युद्ध आरंभ होने पर लगभग सब कुछ गँवा कर सभी बरमा से भारत आये। यहां आकर बालकृष्ण, बाबूलाल और मैं - तीनों भाइयों ने मिल कर व्यापार शुरू किया जिसमें आशातीत सफलता मिली। जापानियों के हार जाने पर और ब्रिटिश राज्य स्थापित हो जाने पर हमारा परिवार फिर बरमा जा बसा, परंतु भाई बालकृष्ण अपने परिवार सहित भारत में ही रहा। दूर-दूर रहते हुए भी हमारा व्यापाराना और पारिवारिक संबंध दृढ़ बना रहा।

सौभाग्य से मैं वहां विपश्यना साधना के संपर्क में आया और उससे मुझे जो आश्चर्यजनक लाभ हुआ उससे भाई बालकृष्ण बहुत प्रसन्न हुआ। अतः उसने भी बरमा आकर पूज्य गुरुदेव के पास एक शिविर किया। लेकिन इसके बाद उसकी विपश्यना छूटती गई, वह एक भिन्न मार्ग की साधना में लग गया। सन १९६९ में मैं बरमा से भारत इसी उद्देश्य से आया कि भारत में खोयी हुई भगवान बुद्ध की पावन शिक्षा पुनः जाग्रत हो। भाई बालकृष्ण अपने परिवार सहित इस दूसरी साधना में इस कदर लगा हुआ था कि वह मेरे इस कार्य में सक्रिय मदद तो नहीं कर सका परंतु अपने छोटे भाई का मन दुखी न हो इसलिए मुम्बई में पहला शिविर लगने के बाद उसने दूसरा शिविर मद्रास (चेन्नई) में लगाया। उसकी सारी व्यवस्था उसने स्वयं की और मेरी भाभी को भी शिविर में सम्मिलित कराया। मुझे बड़ा सुखद आश्चर्य हुआ क्योंकि वह अन्य साधना में इतना गहरा संलग्न हो चुका था फिर भी इस साधना के शिविर में मेरी इतनी सहायता की। मैंने देखा, उसे मेरे प्रति कितना प्यार था। यद्यपि वह स्वयं इस शिविर में नहीं बैठा फिर भी मैं जब भारत भर में धर्मचारिका करने निकला तब उसने इसमें भी बहुत मदद की और मेरे साथ एक सहायक लगा दिया जो आज तक मेरी सेवा में लगा है।

समय बीतता गया। भारत में विपश्यना की प्रसिद्धि बढ़ती

गयी और इसी प्रकार विदेशों में भी। मैं बहुत चाहता था कि मेरा बड़ा भाई इस मार्ग को ग्रहण करे परंतु उसे बहुत झिझक थी। इस पर भी मेरा मन रखने के लिए वह मेरे एक शिविर में सम्मिलित हुआ। इसके बाद तो अंत तक विपश्यना में ही जुड़ा रहा। उसने विपश्यना साधना के अभ्यास में बहुत प्रगति की और साथ-साथ नैसर्गिक नियमों पर आधारित इसकी विशिष्टता को भी खूब गहराई से समझ गया। अतः उसे केवल आचार्य ही नहीं बल्कि आंध्र, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल - भारत के इन चारों दक्षिणी प्रदेशों का प्रधान आचार्य बना दिया। जिम्मेदारी बहुत बड़ी थी परंतु वह अपने काम-धंधे और पारिवारिक तथा सामाजिक जिम्मेदारियों में लगे रहने पर भी इसे बड़ी कुशलता से निभाता रहा। अब उसके अभाव की पूर्ति के लिए जिस व्यक्ति को नियुक्त करेंगे, उसे बड़े भैया द्वारा की गई सुचारू व्यवस्था से अच्छा मार्गदर्शन मिलेगा।

बड़े भाई की दान प्रवृत्ति अनुकरणीय थी। जब कभी मैं मद्रास (चेन्नई) में रहता तो देखता कि वह नित्य प्रातःकाल मेरीन ड्राइव के समुद्र तट पर जाकर गरीबों को भोजन बांटा करता था। उसके प्यार भरे व्यवहार के कारण गरीब बच्चे और बड़े सभी अनुशासन का पालन करते थे। वे एक कतार में बैठ जाते और भोजन ग्रहण करते। छीना-झपटी, उपद्रव आदि कदापि नहीं करते। बड़े भाई का यह नित्य-प्रति का भोजन-दान देख कर मन गद्‌गद हो उठता था। दान तो उसके स्वभाव में था। उसने मद्रास में अग्रवाल भवन का निर्माण किया जो धर्मशाला के रूप में आज भी लोगों के काम आ रहा है। चूरू में उसने पूज्य पिताजी की स्मृति में हाई स्कूल का निर्माण किया जो वहां के विद्यार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी साबित हो रहा है।

बड़े भाई के दान-पुण्य के कारण उसके व्यापार में जो विशद अभिवृद्धि हुई उसे देख-सुन कर मन प्रसन्नता से भर उठता है और मेरी स्मृति-पटल पर यह पुराना दोहा जाग उठता है --

''ऋतु बसंत जाचक भयो, हरख दियो द्रुम पात।
ताते नव पल्लव भये, दिया दूर नहीं जात।।''

जिस दान और पुण्य फल से बड़े भाई और उसका परिवार पल्लवित हुआ, वैसे ही ९२ वर्ष की अवस्था तक विपश्यना में दृढ़तापूर्वक लगे रहने के कारण साधना में उसका अभ्यास इतना दृढ़ हुआ कि शरीर छूटने के पहले कुछ समय पूर्वजन्म का एक दूषित कर्म-संस्कार उभरा जो कि विपश्यना द्वारा अन्य अनेक पूर्व कर्म-संस्कारों के निष्कासन कर दिये जाने पर भी बचा रहा। इसके कारण उसे कष्ट तो अवश्य भोगना पड़ा परंतु उस समय की बेहोशी की अवस्था में भी उसने मैत्री ग्रहण की, यह अच्छा लक्षण था। पुत्र श्रीप्रकाश ने बताया कि शरीर छूटने पर भी उसका मृत चेहरा बहुत शांत था और मुझे भी जो आभास हुआ उससे पूर्ण विश्वास है कि वह ऊर्ध्वस्थित तुसित देवलोक में जन्मा है। अपने भाइयों के प्रति उसके असीम प्यार से तथा उसके आदर्श धर्ममय जीवन से हम सबको प्रेरणा मिलती रहे।

सबका मंगल हो! सबका कल्याण हो!

श्रद्धालु अनुज,
सत्यनारायण

दीपावली का महत्त्व

इस प्रकाश पर्व के सही महत्त्व को समझें। हमें अंधकार से प्रकाश की ओर जाना है। इस ओर हमें स्वयं गमन करना है। हम प्रकाश के दीपक जलाते हैं, अच्छा है। इससे मन प्रफुल्लित होता है। बाहरी प्रकाश का महत्त्व उजागर होता है। परंतु हमारे भीतर जो अंधकार समाया हुआ है उसे दूर करके प्रकाश कैसे जगाएं? इसके लिए प्रकृति के अनजाने रहस्य को समझना आवश्यक है। प्रकृति के या यों कहें - कुदरत के या निसर्ग के नियमों को समझना आवश्यक है। पुरातन भारत में निसर्ग के ब्रह्मांड-व्यापी नियमों को ही धर्म कहते थे। यानी प्रकृति जिन नियमों को धारण करती है वह धर्म है। वे नियम हमें भी धारण करने चाहिए। समझें, प्रकृति कैसे धर्म धारण करती है? धरती में जैसा बीज बोयें, फल वैसा ही आयेगा, यही धरती का धर्म है। दूसरा फल नहीं आ सकता। आम का बीज बोयें तो उससे नीम का फल नहीं आ सकता। नीम का बोयें तो उससे आम का फल नहीं आ सकता। दुनिया की कोई शक्ति, कोई देवी-देवता या जिसे हम ईश्वर कहें, ब्रह्म कहें, वह भी इस नियम में कुछ रद्दोबदल नहीं कर सकता। नियम नियम है - जैसा बीज वैसा फल। इसी प्रकार जैसा हमारा कर्मबीज वैसा ही उसका कर्मफल। इस धर्म नियामता को कोई नहीं बदल सकता। हम बीज तो बोयें नीम का और कातर कंठ से प्रार्थना करें - हे गुरु महाराज, हे देवी, हे देवता, हे ईश्वर, हे ब्रह्म - मुझे आम के फल दो। तो सारे जीवन रोते ही रह जाएंगे, आम का फल आने वाला नहीं है। प्रकृति का यही नियम साधना करते-करते खूब समझ में आने लगता है। यह भी खूब समझ में आने लगता है कि जीवन में यदि कोई सुखद घटना घटी तो वह हमारे पूर्व जन्मों के अथवा वर्तमान जन्म के किसी शुभ कर्म का ही सत्फल है। यह किसी अदृश्य देवी, देवता की कृपा से प्राप्त नहीं हुआ है। इसी प्रकार जीवन में अनचाही घटना घटे तो भी इसे अपने पूर्व जन्मों के अथवा इसी जन्म के किसी दुष्कर्म का दुष्फल ही समझें। जीवन में सुखद या दुखद किसी भी स्थिति को किसी अदृश्य शक्ति की कृपा या कोप नहीं मानें। विपश्यना साधना करते हुए निसर्ग के इन नियमों को स्वानुभूति द्वारा जितनी जल्दी हम स्वयं समझ लें और उसे समझ कर उचित अभ्यास करलें उतनी जल्दी अपने संचित दूषित कर्म-संस्कारों का निष्कासन कर सकेंगे। इसी प्रकार भीतर के अंधकार को दूर करते हुए उसे प्रकाश से भर देंगे और अपना सही कल्याण साध लेंगे।

शरीर और वाणी से दुष्कर्म नहीं करें, यह अच्छा है। परंतु यदि मन से दुष्कर्म किये जायं तो अंधकार ही अंधकार है क्योंकि मन ही तो प्रमुख है, प्रधान है। वाणी और शरीर के कर्म का आरंभ मन से ही होता है। यदि इस सच्चाई को भूल जांय और केवल ऊपर-ऊपर से हजार सदाचार का पालन करते रहें परंतु मन का दुराचार दूर न करें तो अंधकार दूर नहीं हुआ। मन में जो दुष्कर्म जागा, हमने रोक भी लिया, उसे वाणी और शरीर पर नहीं आने दिया तो भी मन पर जागा हुआ दुष्कर्म बीज अपना फल दिये बिना नहीं रहेगा। देर-सबेर फल देगा ही। यदि इस दुष्कर्म के बीज के कारण शरीर और वाणी से भी दुष्कर्म करने लगे तब तो इस बीज को खूब बढ़ावा देने लगे जिससे कि यह

अंकुरित हो, पेड़-पौधा बने और दुष्फल देने लगे। यदि हम इसे यहीं रोक दें, जल देकर इसको बढ़ावा नहीं दें तब यह स्वतः मुरझा कर नष्ट हो जाएगा। यही प्रकृति का, निसर्ग का अटूट नियम है। यदि यह नष्ट नहीं होता तो जन्म-जन्मांतरों तक साथ चलता है और सदा दुष्फल ही देता रहता है। केवल वाणी और शरीर के दुष्कर्म रोक लेने से अंतर्मन में निहित दूषित कर्म-संस्कारों से किंचित मात्र भी छुटकारा नहीं मिलता। अंतर्निहित कर्म-संस्कारों को भुला कर हम मन के ऊपर अंध-श्रद्धा के हजार लेप लगाते रहें। इससे मन के जड़ीभूत कर्म संस्कारों के संग्रह पर कोई असर नहीं पड़ता। ये दूषित कर्म बीज हम अनेक जन्मों तक साथ लिए चलते हैं और इनका दुष्फल भुगतते रहते हैं। प्रकृति के इस सर्वव्यापी नियम को समझने के लिए ही हम विपश्यना करते हैं। हमें साधना द्वारा इन्हें समूल नष्ट करना है। हम कर्म के उन बीजों और उनके फलों के नियम के बारे में अपने भीतर प्रकाश पैदा करें और अंधकार दूर करें। यदि भीतर के मन की इस सच्चाई का प्रकाश प्रकट हो जाय तो बड़ा कल्याण होता है। ऐसा प्रकाश ही अपेक्षित है। ऐसा कल्याण ही अपेक्षित है।

विपश्यना के अभ्यास से ही यह समझ में आता है कि दुष्कर्मों के बीजों को बढ़ावा देकर उनके प्रकट होने पर उनकी सच्चाई को स्वीकार करते हुए समता रखें। यह खूब समझते हुए कि जो भी कर्म-संस्कार उभर कर ऊपर आया है, वह अनित्य है, नश्वर है, भंगुर है। इसके कारण शरीर पर सुखद या दुखद जो भी अनुभूति हो रही है हम उसके प्रति न राग करें, न द्वेष। समझते रहें कि यह अनुभूति अनित्य है - उप्पादवय धम्मिनो, उप्पादवय धम्मिनो। उत्पाद होना और व्यय हो जाना, यही तो इसका धर्म है, स्वभाव है। जैसे पानी पर कोई लहर उठती है और तत्काल मिट जाती है। दूसरी उठती है वह भी तत्काल मिट जाती है। यों एक पर एक लहरें आती रहती हैं मिटती रहती हैं। अरे यही प्रपंच तो भीतर समाया हुआ है। विपश्यना से इसे भली-भांति समझें और इस अनित्यधर्मा अनुभूति के कारण कोई प्रतिक्रिया बिल्कुल नहीं करें। न सुखद के प्रति राग की और न दुखद के प्रति द्वेष की। हम दोनों के प्रति तटस्थ भाव बनाये रखेंगे तब स्वतः इन कर्म संस्कारों की शक्ति क्षीण होती जाएगी। क्योंकि हमने उन्हें बढ़ावा नहीं दिया, उनका विशदीकरण नहीं किया। तो दुष्कर्मों के संस्कारों का संवर्धन नहीं किया माने दुःख का संवर्धन नहीं किया। अज्ञानवश ही हम ऐसा संवर्धन करते रहते हैं। यही तो हमारे भीतर का अंधकार है। विपश्यना द्वारा इस अंधकार को दूर करें और प्रकाश का जीवन जीयें।

भीतर का संस्कार उभर कर ऊपर आया तो भले छोटा-सा अंकुर ही फूटा पर उसे पानी नहीं दिया तो वह सूख ही जाएगा। अगर हम पानी देंगे तो यह कर्म संस्कार का अंकुर पौधा बनेगा, बढ़ कर वृक्ष बनेगा और अनेक फल देता ही जाएगा। इसमें किसी देवी-देवता का हाथ बिल्कुल नहीं होता। हम स्वयं समझते हुए अपने संचित कर्म संस्कारों को बढ़ावा न देकर इस प्रकार नष्ट करते जाएंगे तो दुख से दुख मुक्ति की ओर बढ़ते चले जाएंगे। अन्यथा तो बाहर ही बाहर हजार दीपावली मनाते रहें, भीतर तो अंधकार है ही और उसका संवर्धन हो ही रहा है। हम इस मिथ्या भ्रांति में भले संलग्न रहें कि हम पर तो किसी गुरु महाराज की, किसी देवी की, देवता की कृपा हो ही जाएगी क्योंकि हम उसका नाम लेकर, उसकी पूजा करके उसको प्रसन्न कर रहे हैं। यह बड़ी भ्रांति है। यदि वह प्रकृति के नियम को ही नहीं समझता तो हमारी सहायता कैसे करेगा? जब हम देखते हैं कि भीतर ही भीतर विकार भरे हैं हम उनका संवर्धन कर रहे हैं और किसी अदृश्य शक्ति को निरर्थक प्रसन्न करने में लगे हैं तो दुखों से मुक्ति कैसे हो सकती है। इन चिर संचित संस्कारों के मूलोच्छेदन से ही दुखों का मूलोच्छेदन होता है। प्रकृति के अटूट नियमों की इस सच्चाई को समझना और उनका पालन करना यही तो प्रकाश है। अतः विपश्यना करते जाएंगे और भीतर प्रकाश जगाते जाएंगे।

मैं ब्रह्मदेश में जन्मा, पला, बड़ा हुआ और वहीं मुझे यह कल्याणकारी विद्या मिली। वहां भी एक पर्व ऐसा आता है जिसमें दीवाली की भांति खूब दीये जलाये जाते हैं। खूब प्रकाश किया जाता है और बड़ी खुशियां मनाई जाती है। परंतु उस देश में अनेक लोग ऐसे भी होते हैं जो इस पर्व के अवसर पर उस दिन विपश्यना करते हुए भीतर के अंधकार को दूर करने का काम करते हैं। हमें उनसे प्रेरणा लेनी चाहिए। इस प्रकाश पर्व के महत्त्व को समझते रहना चाहिए। बाह्य जीवन में शरीर और वाणी से कोई दुष्कर्म तो नहीं ही करें परंतु भीतरी जीवन में भी दुष्कर्मों के बीजों का मूलोच्छेदन करके अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ते जांय।

इस धर्ममय संदेश को समझते हुए ही नव-वर्ष का प्रकाश से स्वागत करें। प्रतिदिन मन को अंधकार से दूर करते हुए कल्याणकारी प्रकाश की ओर बढ़ते जांय। इसी में सबका भला है! सबका मंगल है! सबका कल्याण है!

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

दीपावली एवं नववर्षाभिनंदन

हर वर्ष की तरह अनेक साधकों की ओर से दीपावली एवं नव वर्ष के अभिनंदन-पत्र मिले हैं। एक-एक को नव वर्ष की मंगल कामना प्रेषित कर पाने का अवसर नहीं मिल पाया, इसलिए 'विपश्यना' पत्रिका के माध्यम से उन्हें तथा अन्य सभी साधक-साधिकाओं को मेरी असीम मंगल मैत्री पहुँचे! नव वर्ष सबके मानस में धर्म की नवज्योत प्रज्वलित करे! दिनोंदिन प्रज्ञा पुष्टतर होती जाय! धर्म धारण करने का मंगलकारी फल प्रभूत हो! प्रभावशाली हो! सबका मंगल हो!

मंगल मित्र,
सत्यनारायण गोयन्का

विशेष सूचना

भारत तथा विश्व में कहीं से भी **ग्लोबल पगोडा** के लिए डेबिट या क्रेडिट कार्ड से ऑन लाइन दान की सुविधा निम्न लिंक पर उपलब्ध है। साधक इसका लाभ उठा सकते हैं।

website: www.globalpagoda.org; for donation:--
http://www.globalpagoda.org/donate-online

Registered No. NSK/46/2009-2011

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011

सयाजी ऊ बा खिन की पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में 'ग्लोबल पगोडा' में पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में एक दिवसीय महाशिविर

२२ जनवरी, २०१२, रविवार, समयः प्रातः ११ बजे से अपराह्न ४ बजे तक,
'ग्लोबल विपश्यना पगोडा' के बड़े धम्मकक्ष (डोम) में **पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य** में **एक दिवसीय** शिविर का लाभ उठाएं। कृपया ध्यान दें कि इस विशाल शिविर की व्यवस्था सुचारुरूप से हो और आपको किसी प्रकार की असुविधा न हो, इसलिए **बिना बुकिंग कराये न आएं। बुकिंग संपर्क : मो. 09892855692, 09892855945, फोन नं.: 022-28451170, 33747543, 33747544, (फोन बुकिंग समय :** प्रातः ११ से सायं ५ तक, प्रतिदिन)

ईमेल Registration: oneday@globalpagoda.org;
Online Registration: www.vridhamma.org

अतिरिक्त उत्तरदायित्त्व

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1-2. Mr. John & Mrs. Cindy Pinch, *To assist the Center Teacher for Dhamma Manda*

नये उत्तरदायित्त्व

आचार्य

1. Mr. Geoffrey White, *To serve Indonesia*
2-3. Mr. Ernst & Mrs. Karen Arnold, *To serve Dhamma Pabha, Australia*

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1-2. Mr. Gerald Roessner & Mrs. Monika Fischer, Germany

सहायक आचार्य

१. श्री हीरामन राजपूत, धुले
२. श्री उत्तम कांबले, बीड
३. श्रीमती सीमा प्रधान, बैंगलोर
4. Mrs Anneke Mayer, USA
5. Mr. David Fumadó Dubé, Spain
6. Mrs. Asha Wollman, UK
7. Ms. Adriana Patiño, *Mexico*
8. Mr. Kevin Nash, *USA*

बालशिविर शिक्षक

१. श्री मनहर शाह, कच्छ
२. श्री सतीश मोटा, कच्छ
३. श्रीमती सरस्वती पटेल, कच्छ
४. श्रीमती रसीला संपत, कच्छ
५. श्रीमती ललिता सर्वैया, कच्छ
६. श्रीमती विद्या पई, मुंबई
७.श्रीमती ज्योति मोलिया, राजकोट
८. श्रीमती गीता कापडिया, राजकोट
९. श्री भरतभाई कापडिया, राजकोट
10. Mrs. Assumpta Farre' Torrents, Spain
11. Mrs. Marrianne Baumann, Switzerland
12. Ms. Anke Schell, Germany

दोहे धर्म के

श्रद्धा तो जागे मगर, अंध न बनने पाय।
प्रज्ञा ज्ञान प्रदीप की, ज्योति नहीं बुझ जाय॥
एक एक दिन बीतते, जीवन होय अशेष।
बिना अथक पुरुषार्थ के, कर्म न होय अशेष॥
बिन प्रयत्न पूरे न हों, छोटे मोटे काम।
बिना स्वयं उद्यम किये, कहां मुक्ति का धाम?
उद्यम में पुरुषार्थ में, दिन दिन उन्नति होय।
बने सहायक धर्म के, धर्म सहायक होय॥
सतत कर्मरत ही रहे, विकल न होय उदास।
भरा रहे उत्साह मन, कभी न होय निराश॥
अंतर में दीपक जला, देख लिया पथ गूढ़।
बाहर जग भटकत फिरा, पंथ न पाया मूढ़॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

राख धरम रो आसरो, राख धरम आधार।
बाधा बिघन हटाय कर, धरम तारसी पार॥
किसो धरम रो मैत्रिबळ, बिसधर निरबिस होय।
सदा सुरक्छित स्वयं भी, साधक रक्छित होय॥
धन-दौलत मँह पुत्र मँह, कठै सुरक्छा नांय।
सही सुरक्छा धरम मँह, चित जद धरम समाय॥
पार तारसी धरम ही, और न तारै कोय।
सरण ग्रहण कर धरम री, धरम सहायक होय॥
अबळ अरक्छित ही रवै, चोरावै रो दीप।
धरम-ढाल ऐसी मिलै, ज्यूं नाविक नै द्वीप॥
बंसी बाजै चैन री, सुख छावै संसार।
द्वेस द्रोह सारा मिटै, रवै प्यार ही प्यार॥

एक साधक
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष** 2555, **कार्तिक पूर्णिमा, 10 नवंबर, 2011**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/46/2009-2011**

Licenced to post **without Prepayment of postage** -- WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org